P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-4* ISSUE-8* April- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

महात्मा गाँधी का दर्शन व ईश्वर की प्रकृति

विकास कुमार सरकार
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
दर्शनशास्त्र विभाग,
सेण्ट एण्ड्रयूज कालेज,
गोरखपुर, उ0प्र0

सारांश

जिस प्रकार ईश्वर का विवरण दिया जाता रहा है, वे सब किसी न किसी रूप में किसी विशेष परिप्रेक्ष्य पर आधृत होते हैं। ईश्वर को अनेकों नाम दिए जा सकते हैं। अतः उन्हें 'अनाम' कहा जाता है। उनके असंख्य रूप हो सकते हैं, अतः ईश्वर को 'सत्य' कहा जाता है आदि–आदि। तो गाँधी जी को यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि इन सभी परिप्रेक्ष्य– आधृत विवरणों से ऊपर उठ, इन सबों को समाविष्ट करते हुए ईश्वर का एक पूर्ण विवरण का प्रयास हो। उन्हें लगा कि उनके लिए तो वह विवरण 'ईश्वर' को 'सत्य' कहने में मिल जाता है।

मुख्य शब्द : गाँधी , ईश्वर, प्रकृति, सत्य, प्रेम।

प्रस्तावना

गाँधी जी कहते हैं– "सत्य" शब्द सत् धातु का बना है। सत् का अर्थ है– होना या अस्तिः सत्य का अर्थ हुआ– होने का भाव या अस्तित्व। सत्य के सिवा दूसरी किसी चीज की हस्ती ही नहीं है। परमेश्वर का सच्चा नाम ही 'सत्' या सत्य है। इसलिए परमेश्वर 'सत्य' है जैसा कहने की अपेक्षा 'सत्य' ही परमेश्वर है। ऐसा कहना अधिक उचित है। राजा या सरदार के बिना हमारा काम नहीं चलता, इसलिए उसका 'परमेश्वर' नाम अधिक प्रचलित है और रहेगा। लेकिन विचार करने से मालूम होगा कि 'सत्' या 'सत्य' ही सच्चा नाम है और यही पूरा अर्थ प्रकट करने वाला है।"[1] ईश्वर की प्रकृति और अधिक स्पष्ट करते हुए गाँधी जी कहते हैं– "मेरे लिए ईश्वर सत्य है और प्रेम है। ईश्वर आचार नीति है और नैतिकता है, ईश्वर अभय है। ईश्वर प्रकाश और जीवन का स्रोत है और फिर भी इन सबसे ऊपर और परे है। ईश्वर अंतः करण है। वह नास्तिक की नास्तिकता भी है। चूंकि अपने असीम प्रेमवश नास्तिक को भी रहने की छूट देता है। वह हृदयों को टटोलता है। वह वाणी और तर्क से परे है। वह हमें और हमारे हृदयों को स्वयं हमसे बेहतर जानता है। वह हमारी कही हुई बातों को सच नहीं मानता, क्योंकि वह जानता है कि कई बार जान–बूझकर और कई बार अनजाने, हम जो बोलते हैं, हमारा अभिप्राय वह नहीं होता।

जिन्हें ईश्वर की व्यक्तिगत उपस्थिति की दरकार है, उनके लिए वह व्यक्तिगत ईश्वर है। जिन्हें उसका स्पर्श चाहिए, उनके लिए वह साकार है। वह विशुद्धतम तत्व है। जिन्हें आस्था है, उनके लिए तो बस वह है। वह सब मनुष्यों के लिए सब कुछ है, वह हमारे भीतर है, फिर भी हमसे ऊपर और परे है।

उसके नाम पर घृणित दुराचार या अमानवीय क्रूरतायें की जाती हैं, पर इनसे उसका अस्तित्व समाप्त नहीं हो सकता। वह दीर्घकाल से पीड़ा भोग रहा है। वह धैर्यवान है, पर वह भयंकर भी है। वह इस दुनिया और आने वाली दुनिया की सबसे कठोर हस्ती है। जैसा व्यवहार हम अपने पड़ोसियों–मनुष्यों और पशुओं के साथ करते हैं, वैसा ही ईश्वर हमारे साथ करता है।

वह अज्ञानता को क्षमा नहीं करता। इसके बावजूद नित्य क्षमाशील है क्योंकि वह हमें सदा पश्चाताप करने का अवसर देता है।

संसार में उस जैसा लोकतांत्रिक दूसरा नहीं है क्योंकि वह हमको अच्छाई और बुराई में से चुनाव करने के लिए 'स्वतंत्र' छोड़ देता है। उस जैसा अत्याचारी भी आज तक नहीं हुआ जो प्रायः हमारे होठों से प्याला छीन लेता है और स्वेच्छा के नाम पर, हमें हाथ–पैर फेंकने के लिए अत्यन्त संकुचित क्षेत्र देकर फिर हमारी विवशता पर हंसता है।[2]

गाँधी जी आगे कहते हैं कि हिन्दू धर्म में कहा गया है कि यह सब उसका खेल अर्थात् उसकी 'लीला' है अथवा भ्रम यानी माया है। हम नहीं है, मात्र वही है। हमें मात्र उसका स्तुतिगान करना चाहिए और उसकी इच्छानुसार कार्य करना चाहिए।

ईश्वर के नाम के विषय में गाँधी जी के स्पष्ट विचार थे। वे कहते थे– 'ईश्वर के हजार नाम है या कहिए कि वह अनाम है। हमें जो नाम अच्छा लगे, उससे उसकी आराधना अथवा प्रार्थना कर सकते हैं। कोई उसे राम कहता है, कोई कृष्ण, दूसरे लोग उसे रहीम या फिर गॉड कहते हैं। सब एक ही ईश्वर की पूजा है, पर जिस प्रकार सारे आहार सभी लोगों को माफिक नहीं आते, उसी प्रकार सारे नाम सभी को प्रिय नहीं लगते। प्रत्येक व्यक्ति अपने साहचर्य के अनुसार नाम का चयन करता है और अन्तर्यामी, सर्वशक्तिमान तथा सर्वज्ञ होने के नाते वह हमारी अन्तरतम की भावनाओं को समझता है और हमारी पात्रता के अनुसार हमें प्रत्युत्तर देता है।

इसलिए आराधना या प्रार्थना होठों से नही बल्कि हृदय से की जानी चाहिए और इसीलिए मूक या हकला, अज्ञानी या मूर्ख, सभी समान योग्यता के साथ आराधना या प्रार्थना कर सकते हैं। जिनकी जिह्वा पर अमृत किंतु ह्रदय में विष है, उनकी प्रार्थना कभी स्वीकार नहीं होती। इसलिए ईश्वर की प्रार्थना करने वाले अपना हृदय शुद्ध करना चाहिए।[3]

गाँधी जी सभी धर्मो के अनुयायियों से कहते हैं कि ईश्वर सभी का एक है। वे कहते हैं कि मेरी समझ में राम, रहमान, अहुरमज्द, गॉड या कृष्ण मनुष्य द्वारा अदृश्य शक्ति– जो शक्तियों में सबसे बड़ी है– को कोई नाम देने के प्रयास ही हैं। अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं, "जब कोई यह कहता है कि राम या रामनाम का गान केवल हिंदुओं के लिए है, मुसलमान उसमें कैसे सम्मिलित हो सकते हैं तो मुझे मन–ही–मन हँसी आती है। क्या मुसलमानों का ईश्वर एक है और हिन्दुओं, पारसियों या ईयाईयों का कोई दूसरा है ? नहीं, सर्वशक्तिमान एवं सर्वव्यापी ईश्वर केवल एक है। बस उसके नाम अनेक हैं और हम उसका स्मरण उस नाम से करते हैं जिससे हम सर्वाधिक परिचित हैं।[4]

गाँधी जी के अनुसार धर्म मात्र एक सैद्धान्तिक अवधारणा नहीं है जो हमारी बौद्धिक जिज्ञासा को शान्त करता है। यह तो जीवन की एक अनिवार्य व्यवहारिकता है, जीने का सबल एवं आवश्यक ढंग है। भगवत् गीता को अपना सम्बल मानने के कारण एवं उसमें असीम श्रद्धा होने के कारण गाँधी जीपर कभी–कभी हिन्दू धर्म के लिए पक्षताप का आरोप भी लगता है। किन्तु उनका कहना है कि उनका यह विशिष्ट प्रेम है, किन्तु यह उन्हें हिन्दू धर्म का पक्षपाती नहीं बनाता।

अपने धर्म की विस्तृत व्याख्या वे इस प्रकार करते हैं, "मेरे धर्म की कोई भौगोलिक सीमाएँ नहीं है। यदि मेरी उसमें जीवित आस्था है तो वह मेरे भारत–प्रेम से भी आगे बढ़ जायेगा।"[5] वे आगे कहते हैं– "मेरा धर्म कारागृह का धर्म नहीं है। इसमें ईश्वर के दीन–से–दीन प्राणियों के लिए स्थान है। लेकिन यह उद्धतता और जाति, धर्म तथा रंग के गर्व को सहन नहीं करता।"[6] गाँधी जी धर्म के उद्देश्य को इतना अधिक स्पष्ट कर देते हैं कि उनके अनुसार धर्म के हित और देश के हित में कोई अन्तर नहीं रह जाता। वे कहते हैं– "मेरा यह कथन निस्संदेह एक अर्थ में सही है कि मैं अपने धर्म को अपने देश से ज्यादा प्यार करता हूँ और इसीलिए मैं हिन्दू पहले हूँ और राष्ट्रभक्त बाद में। इससे मैं अच्छे–से–अच्छे राष्ट्रभक्त से कम राष्ट्रभक्त नहीं बन जाता। मेरा आशय केवल यह है कि मेरे देश के हित और मेरे धर्म के हित एक ही हैं।

इसी प्रकार, जब मैं कहता हूँ कि मैं अपनी मुक्ति को सर्वाधिक, यहाँ तक कि भारत की मुक्ति से भी अधिक, महत्व देता हूँ तो इसका आशय यह नहीं होता कि मेरी निजी मुक्ति के लिए भारत की राजनीतिक अथवा किसी अन्य प्रकार की मुक्ति की बलि देनी होगी। इसका अनिवार्य आशय यह होता है कि दोनों सहगामी हैं।"[7] वे स्वीकारते हैं कि हिन्दू धर्म के प्रति उनके मन के भाव किस प्रकार के हैं– यह बताना उनके लिए कठिन है। वे कहते हैं कि यह उतना ही कठिन है जितना उनके लिए पत्नी के प्रति अपने मनोभावों को बताना कठिन है। वे यह स्वीकारते हैं कि अपनी पत्नी की कमी या दोषों की भी उन्हें जानकारी है, फिर भी उनके प्रति एक अटूट बन्धन की भावना है। उसी प्रकार गाँधी जी के मन में हिन्दू धर्म की सीमाओं तथा दोषों के बाद भी उसके प्रति एक बंधन तथा सामीप्य की भावना है।

किन्तु उनका यह भी विश्वास रहा कि हिन्दू धर्म के प्रति इस अभिवृत्ति की शुद्धता में अन्य धर्मो के प्रति भी उसी प्रकार का आदर भाव जागता है। इसी कारण गाँधी जी सदा ही अन्य धर्मो तथा विभिन्न सन्त, सूफी आदि के विचारों से कुछ न कुछ सीखते रहे, लेते रहे। गाँधी जी ने 1921 में ही अपनी इस अभिवृत्ति की रूपरेखा खींची थी। यहाँ उनकी पंक्तियों को दुहराते हुए उनके विचारों को स्पष्ट किया गया है। वे कहते हैं– "After long study and experience I have come to the conclusion that

1. All religions are true,
2. All religious have some error in them,
3. All religions are almost as dear to me as my own Hinduism, in as much as human beings should be as dear to one as one's close relatives.

My own veneration for other faiths is the same as that for my own faith, therefore no thought of conversion is possible. The aim of fellowship should be to help a Hindu to become a better Hindu, a Mussalman to become a better Mussalman, and a Christian a better Christian.... Our prayer for others must be Not God give him the light thou has given me, But' Give him all the light and truth that he needs for his development. Pray merely that your friends may become better men, Whatever their forms of religon."[8]

इस प्रकार हम देखते हैं कि गाँधी जी स्वीकारते हैं कि सभी धर्म–यथार्थ हैं, सत्य हैं। वे स्पष्ट कहते हैं कि सभी धर्म उन्हें उतने ही प्रिय हैं जितना हिन्दू धर्म। गाँधी जी कहते हैं– "सच पूछा जाए तो जितने व्यक्ति हैं, उतने ही धर्म हैं।"[9] वे आगे कहते हैं– "धर्म एक ही बिन्दु पर पहुँचने वाले भिन्न–भिन्न मार्ग हैं। यदि गन्तव्य एक ही है तो इससे क्या फर्क पड़ता है, यदि हम वहाँ तक पहुँचने के लिए अलग–अलग मार्ग पकड़ें ?"[10]स्पष्ट है कि गाँधी जी 'धर्म' शब्द का जिस अर्थ में प्रयोग कर रहे हैं उनका संबंध और बातों से अधिक नीति तथा सदाचार से है और वह धर्मालोचकों के अर्थ से भिन्न

है। गाँधी जी के अनुसार धर्मो का वास्तविक लक्ष्य मनुष्य को श्रेष्ठ बनाना है।

इंग्लैंड में उनका परिचय वहाँ के कुछ बुद्धिजीवियों से हुआ तथा साथ–साथ वे ईसाई धर्म को भी जान पाये। कहा जाता है कि रोम के सेंट पीटर्स में जब उन्होंने ईसा मसीह की प्रतिमा देखी, तो उनकी आँखों में आँसू निकल पड़े। महात्मा गाँधी के मन में ईसा के जीवन तथा व्यक्तित्व के प्रति अपार श्रद्धा थी। इसी प्रभाव में अपने विचारों में भी उन्होंने ईसा की कुछ शिक्षाओं को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। इस प्रभाव के लिए, कुछ सीमा तक वे टॉलस्टॉय के ऋणी हैं। टॉलस्टॉय ने अपने "The Kingdom of God is within you" में ईसाई शिक्षा को एक नये रूप में प्रतिष्ठिता किया था। उनके द्वारा ईसाई धर्म के अर्थ निरूपण में गाँधी जी ने सार–गर्भित विचार पाया। विशेषतः टॉलस्टॉय ने जिस ढंग से कष्ट झेलने की शक्ति तथा उसमें निहित गरिमा का चित्र खींचा, उससे गाँधी जी बड़े प्रभावित हुए। उनके लिए यह एक प्रकार से अपने सत्याग्रह विचार को बढ़ाने का प्रेरणा–स्रोत बन गया। उसी प्रकार अमेरिकन विचारक थोरू के विचारों का प्रभाव भी गाँधी जी के मन पर पड़ा। थोरू का 'सामाजिक अवज्ञा' के विचार में गाँधी जी ने एक नवीन सम्भावना देखी। उन्हें लगा कि इस विचार का विकसित रूप अहिंसक सत्यागह का रूप हो सकता है, जिसका उपयोग बड़ी–बड़ी सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याओं पर भी किया जा सकता है।

उन्होंने यह प्रयोग अपने आन्तरिक अनुशासन के लिए भी किया तथा बाह्य जीवन की समस्याओं पर भी किया। अतः कहा जा सकता है कि उनके विचार वस्तुतः इन्हीं प्रयोगों के निचोड़ हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

महात्मा गाँधी ने अपने दर्शन में सर्वप्रथम ईश्वर को सत्य माना है। किन्तु ईश्वर में विश्वास न रखने वाले के लिए इस रूप में स्वीकार करना एक कठिन कार्य है।

अतः गाँधी जी ने बाद में अपने विचारों में संशोधन करते हुए सत्य के ईश्वर कहा जिससे सभी के लिए सत्य ग्राह्य हो गया।

निष्कर्ष

यह कहना सर्वथा उचित है कि महात्मा गाँधी के विचारों में एक मौलिकता है, नवीनता तथा ताजगी है। फिर भी, यह भी सच है कि उनके विचारों ने कुछ प्रभावों के अन्तर्गत ही अपना रूप लिया है। एक प्रमुख प्रभाव, जिसकी छाप उनकी मानसिकता पर उनके प्रारम्भिक जीवन में ही पड़ी, वह हिन्दू परम्परा की छाप है। उनका बाल्यकाल एक ऐसे वातावरण में व्यतीत हुआ था जिसमें हिन्दू धर्म एवं परम्परा के प्रति प्रबल श्रद्धा थी। बहुत ही छोटी उम्र में गाँधी जी ने गीता तथा रामायण का अध्ययन कर लिया था और इसके साथ वैष्णव तथा जैन साहित्य में भी प्रवेश पा लिया था। इन अध्ययनों से उनकी धर्मिकता तथा नैतिकता तथा नैतिक भावना को पनपने का आधार मिल गया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *मंगल प्रभात, अध्याय– 1*
2. *यंग इंडिया, 5/3/1925, पृ0– 81*
3. *वहीं, 24/9/1925, पृ0– 331*
4. *हरिजन, 28/4/1946, पृ0– 111*
5. *यंग इंडिया, 11/8/1920, पृ0– 4*
6. *वहीं, 1/6/1921, पृ0– 171*
7. *वहीं, 23/2/1922, पृ0– 123*
8. *Datta, D.N. : The Philosophy of Mahatma Gandhi, P. 49.*
9. *महात्मा गाँधी , हिन्द स्वराज और इंडियन होम रूप, पृ0– 49*
10. *वहीं, पृ0– 50*